International Journal of Sanskrit Research 2016; 2(3): 08-09

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2016; 2(3): 08-09
© 2016 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 09-03-2016
Accepted: 11-04-2016

डॉ. हर्ष देव सिंह
पी. एच. डी. संस्कृत विभाग
जम्मू विश्वविद्यालय जम्मू व काश्मीर

Correspondence
डॉ. हर्ष देव सिंह
पी. एच. डी. संस्कृत विभाग
जम्मू विश्वविद्यालय जम्मू व काश्मीर

कृषि शब्द की व्युत्पत्ति और उसका महत्त्व

डॉ. हर्ष देव सिंह

कृषि सभी प्राणियों विशेषकर मानवों के जीवन का आधार है, क्योंकि भूख की शान्ति, शरीर की वृद्धि, बल, ऊर्जा आदि या यूं कहिए कि जीवन अन्न पर ही आश्रित है, तथा अन्न कृषिकर्म द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। उस कृषि का अर्थ क्या है? इस प्रश्न के समाधान के लिए संस्कृत वाङ्मय में विविध प्रकार से विचार किया गया है। कृषि शब्द की व्युत्पत्ति 'कृष्' विलेखने धातु (अर्थ खींचना, घसीटना, खोदना, हल जोतना, खूंड़ निकालना, आकृष्ट करना, पीड़ा देना, वश में करना, छीनना आदि कई अर्थ हैं) [1] से इत् प्रत्यय के योग से हुआ है, जिसका अर्थ है विलेखन क्रिया या कृषि अथवा खेती है।

प्राचीन भारतीय अर्थव्यवस्थापक मनु ने 'वार्ता' को अर्थ प्राप्ति का मूल कारण माना है। वैदिक काल से ही भारत कृषि प्रधान देश रहा है और आज भी जीवनोपयोगी खाद्य सामग्री कृषि ही हमको देकर हमारा पोषण कर रही है। प्राचीन काल में भी कृषि का महत्त्व था और आधुनिक विकासशील जगत् में भी कृषि का महत्त्व स्वीकार किया गया है। उद्योग के बल पर ही व्यक्ति इस कृषि को उपजाऊ बनाकर अधिक पशुओं की खाद देकर, अच्छी प्रकार हल चलाकर उत्पादन बढ़ाता है। मनुष्य की प्राणरक्षा के लिए अन्न की ही सर्वप्रथम आवश्यकता है। अन्न की उत्पत्ति कृषि के द्वारा ही होती है। अतः इसीलिए कृषि का महत्त्वपूर्ण स्थान निर्धारित किया गया है। अन्न के बिना कोई भी व्यक्ति अधिक दिन तक जीवित नहीं रह सकता है। यदि जीवित रह भी सकता है तो शारीरिक परिश्रम करता हुआ नहीं। इसीलिये जीवन को अन्नमय प्राण माना गया है। गीता में भी कृषि का महत्त्व बताते हुए "प्राणियों को उत्पत्ति अन्न से बताई गयी है और अन्न की उत्पत्ति कृषि और वृष्टि से होती है।" [2]

इस प्रकार कृषि और कृषि से उत्पन्न होने वाले अन्न का जगत् में इतना महत्त्व माना गया है। प्राचीन भारतीय अर्थशास्त्रियों ने अन्न-धन को देनेवाली कृषि पर अधिक ध्यान दिया है। कृषि की सुरक्षा, उन्नति और अधिक उत्पादन पर यदि व्यक्ति ध्यान देगा तो उसे जीवनोपयोगी किसी भी वस्तु की कठिनाई नहीं होगी। कृषि के लाभ और कृषि की उन्नति की लिए व्यक्ति क्या एकांकी रह सकता है ? कभी नहीं। कृषि से अधिक अन्न उत्पादन के लिए पशु की नितान्त आवश्यकता है। कृषि और पशु के सहयोग एवं अपने परिश्रम से मनुष्य जिस उत्पादन को बढ़ाता है उस का उपभोग क्या वह स्वयं ही कर लेता है ? अपनी आवश्यकता की पूर्ति के पश्चात् कृषक के पास जो अतिरिक्त अन्न होता है उसे वह दूसरों के लाभ के लिए और अपनी अर्थ प्राप्ति के लिए 'व्यापार' के रूप में विक्रय कर देता है। ऐसी ही स्थिति में व्यापार का जन्म हुआ है। कृषि के माध्यम और उद्योग के बल से ही अर्थ की प्राप्ति हुई। ये सब महत्त्व प्राचीन भारतीय अर्थशास्त्र में वर्णित 'वार्ता' के ही अन्तर्गत आ जाते हैं। 1– कृषि 2– पशु 3–वाणिज्य।

वाणिज्य की वृद्धि होने पर दोनों रूपों में अन्न और अर्थ की दूसरों की आवश्यकता की पूर्ति हेतु ही आदान-प्रदान किया गया है। ब्याज पर ऋण लेने को 'कुसीद' कहा गया है। मनु ने वार्ता में कुसीद शब्द का प्रयोग भी किया है। किसी व्यक्ति, समाज और राष्ट्र की जब अपनी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होगी तभी वह दूसरों को अपने अर्थ लाभ के लिए 'कुसीद' पर अर्थ दे सकता है। इस शब्द से यही प्रतीत होता है कि प्राचीन भारत में प्राचीन भारतीय आर्थिक विचारकों ने अपने सुप्रबन्ध से अर्थव्यवस्था को जनहित के योग्य बनाया हुआ था। लोग धन सम्पन्न थे और अर्थवृद्धि के लिए व्यापारिक कार्य उन्नति पर थे। व्यापार की उन्नति के लिए राज्य की ओर से प्रोत्साहन दिया जाता था। अर्थ की वृद्धि के लिए व्यक्ति अपने अन्न और अर्थ को कुसीद प्राप्ति हेतु दूसरों को देता है। इस प्रकार 'वार्ता' शब्द में इतने अर्थ सन्निहित है। इनसे पूर्व वर्णित वस्तुओं के बोध मात्र से 'अर्थ' एवं अर्थशास्त्र के महत्त्व को समझा जा सकता है।

दैनिक जीवन में कृषकों को अनेक प्रकार की आपत्तियों का सामना करना पड़ता था जो प्राकृतिक तथा प्राकृतिक तथा मानवीय दोनों ही रूपों में उनके समक्ष खड़ी होती थीं। इन से बचने के लिए कृषक

विविध उपायों को अपनाते थे। किसानों के खेत प्रायः चारागाहों और जंगलों से सटे होते थे। [3] इनमें विचरण करने वाले पालतू एवं जंगली जानवरों से फसल को चट कर जाने का भय किसानों को सदा बना रहता था। [4] इनसे बचने के लिए कृषक अपने खेतों के चतुर्दिक ऊँची–ऊँची बाड़ लगा देते थे। [5] मनु ने इन बाड़ों के विषय में लिखा है कि खेतों के चतुर्दिक निर्मित बाड़े इतनी ऊँची होनी चाहिए कि उनसे पशु इत्यादि प्रवेश न कर सकें। बाड़ बनाने का उद्देश्य फसलों को एक दूसरे से पृथक् रखना भी था तथा यह भी कि जल प्रवाह तथा वायु प्रवाह से बीज उड़कर दूसरे के खेतों में न जा सके।

खेतों में पशुओं को छोड़ने वालों के लिए कड़े दण्ड का विधान था। मनु याज्ञवल्क्य आदि व्यवस्थापकों ने प्रकृति-क्षति तथा परिस्थिति के अनुसार अलग-अलग दण्ड की व्यवस्था की है। पशुपालक अधर्म तथा राजदण्ड के भय से पशुओं को प्रायः खेतों से दूर ही रखते थे। [6] अन्य पशुओं से रक्षार्थ कृषक खेतों के चारों ओर खाई खुदवाते थे अथवा इसके लिए कभी-कभी रखवाले भी नियुक्त कर दिये जाते थे। भाष्य में इनके लिए यशपाल नाम आया है। [7] पक्षियों से फसलों को बचाने के लिए खेतों में घासफूस के पुतले खड़े किये जाते थे जिनसे डर कर पशु, पक्षी, सियार, मृग आदि नहीं आते थे। [8] आज भी गाँवों में खेतों को पशु-पक्षियों से बचाने के लिए ऐसा किया जाता है।

इसके अतिरिक्त प्राकृतिक संकेतों के आधार पर अपने अनुभव से कृषक अनेक बातों का पूर्वानुमान कर लेते थे जैसे वे जानते थे कि यदि बादल आयें और कपिलवर्णा बिजली कौंधी तो तेज वायु चलेगी। यदि लाल कौंध निकली तो तेज धूप निकलेगी। पीली कौंध फसल के लिए हितकर थीं, किन्तु यदि कौंधती बिजली का रंग सफेद हुआ तो दुर्भिक्ष पड़ेगा। [9]

अधिशेषधान्यों को रखने के लिए कृषक कोठियाँ और खत्तियाँ बनाते थे जिनका उद्देश्य संभवतः संचित खाद्यान्नों की रक्षा के साथ-साथ आपातकालीन उपयोग था। महाभाष्य से पता चलता है कि अन्नागार को कोष्ठ या कुसूल कहते थे। [10] जो व्यक्ति पात्रों में अन्न संग्रहण करता था कुंभी धान्य कहलाता था। [11] धान्यों को कोटि कुंभों में भरकर संचित करने वालों को नैयतिक कहा जाता था। [12] रामायण में 'कुंभी' तथा 'करभी' नामक कोठारों का उल्लेख आया है। [13] धनी व्यक्तियों को अनाज तथा अन्य वस्तुओं को संग्रहण करने की आदत थी। मिलिन्दपन्हों से पता चलता है कि एक धनी व्यक्ति ने सभी प्रकार के अन्न जैसे गेहूँ, चावल, ज्वार, बाजरा, सूखे अनाज में भरकर रख लिया। [14] लेकिन निर्धन व्यक्तियों के पास अधिक अन्न की क्षमता नहीं थी। एक स्थान पर उल्लेख है कि किसान ने खेत जोता, बोया तथा अपना अन्नागार अनाज से भर लिया फिर अधिक समय तक न जोता न बोया बल्कि संग्रहीत अनाज के बल पर रहा। [15]

मनु ने ब्राह्मण के अनाज संग्रह हेतु नियम बनाते हुए कहा है कि ब्राह्मण या तो ऋत अर्थात् अमृत द्वारा रक्षित होना चाहिए या फिर मृत और प्रमृत द्वारा। 'ऋत का अर्थ उज्जवल अन्न तथा 'अमृत' का अर्थ जो बिना मांगे मिल गया हो तथा 'मृत' का अर्थ भिक्षा मांग कर और प्रमृत का अर्थ (मृत्यु का कारण) कृषि कर्म घोषित किया गया है। उसे इस बात की अनुमति है कि वो अपना अन्न पात्र भरने के लिए अनाज संग्रह करे अथवा तीन दिनों तक के लिए पर्याप्त अन्न का संग्रह करे तथा आने वाले दिनों के लिए कुछ भी न रखे।' [16] इससे पता चलता है कि कुछ लोग अत्यधिक अन्न संग्रह कर लेते थे जिसे रोकने के लिए भी नियम बनाये गये।

वर्षाकाल में अधिक सुरक्षा की दृष्टि से कृषक अनाज को मिट्टी अथवा बाँस के बने कोठों में रखते थे। कोठों के द्वार पर लगाये जाने वाले ढक्कन को गोबर से तथा फिर चारों ओर से मिट्टी द्वारा पोत दिया जाता था। [17] घर के बाहर जंगलों में भी कोठारों का निर्माण किया जाता था। [18] महाभारत से पता चलता है कि कभी-कभी राज्य की तरफ से भी कृषकों की सहायतार्थ ये कोठार बनाये जाते थे। जिनके द्वारा राज्य गरीब कृषकों को अन्न बीज प्रदान करता था। कोष्ठागार को छिन्न करने वाले व्यक्ति को मनु ने राज्य द्वारा वध की सलाह दी है। जो कोठारों की अप्रतिम उपयोगिता और महत्त्व को स्पष्ट करता है। [19]

आभिलेखिक साक्ष्यों से ऐसे कोष्ठागारों के निर्माण का उल्लेख मिलता है जिनका प्रयोग संक्रमण काल में होता था जैसे महास्थान तथा सोहगौरा से प्राप्त अभिलेख। [20] जैन ग्रन्थ व्यवहारभाष्य में दुर्भिक्ष का उल्लेख मिलता है, "एक समय कोशल देश में दुर्भिक्ष पड़ने पर किसी श्रावक ने बहुत सारा अनाज अपने कोठों में भर लिया था। उस समय वहाँ कुछ जैन साधु ठहरे हुए थे। श्रावक ने उनके लिए आहार की व्यवस्था कर दी तथा उन्हें अन्यत्र विहार नहीं करने दिया। लेकिन कुछ समय बाद अनाज का मूल्य अधिक होने पर लोभ में आकर उसने अनाज को ऊँची कीमत पर बेच दिया। ऐसी अवस्था में जैन साधुओं को भोजन के अभाव में आत्महत्या करनी पड़ी और उनके मृत शरीर को गीध भक्षण कर गये।" [21]

दुर्भिक्ष के अलावा कृषकों को अग्निकाण्ड से भी बहुत हानि होती थी, अतएव वे अग्नि से रक्षा करने के लिए उपाय करते थे। मिलिन्दपन्हों से पता चलता है कि पूर्वी भारत में यह परम्परा थी कि कृषक प्रत्येक झोपड़ी के पीछे पांच पात्र पानी के भरकर रखता था जो आग लगने पर तात्कालिक रूप से प्रयुक्त हो जाते थे। [22]

सन्दर्भ ग्रन्थसूची

1. द्रष्टव्य – संस्कृत–हिन्दी अंग्रजी शब्दकोश
2. अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसंभवः।।– श्रीमद्भगवद्गीता– 3.14
3. महाभाष्य– 18.10.47
4. पतंजलि कालीन भारत, प्रभुदयाल अग्निहोत्री, पृष्ठ– 258
5. वृत्ति तत्रप्रकुर्वीत यामुष्ट्रो ना विलोकयेत्। छिद्रं च वारयेत्सर्वं श्रसूकरमुखानुगम।। – महाभाष्य – 4.8.84, मनुस्मृति – 8.239
6. सस्य विनाशेऽधर्मश्चैव राजभयं च।। – महाभाष्य – 1.4.27.
7. महाभाष्य – 6.2.78
8. महाभाष्य – 1.1.52
9. वाताय कपिला, विद्युतादपायातिलोहिनी।
10. पीतभवति सस्याय, दुर्भिक्षाय सिताभवेत्।।– महाभाष्य– 2.2.13
11. महाभाष्य – 1.2.45
12. महाभाष्य – 1.3.7
13. व्यवहारभाष्य – 1.131, उद्धृत, अच्छेलाल, प्राचीन भारत में कृषि पृष्ठ – 136
14. रामायण – 2.19.71
15. अच्छे लाल प्राचीन भारत में कृषि – पृष्ठ – 88
16. अच्छे लाल प्राचीन भारत में कृषि – पृष्ठ – 88
17. ऋतामृताभ्यां जीवेत्तु मूतेन प्रमृतेन वा। सत्यानृताभ्यामपि वा न श्रववृत्या कदाचन।। कुसूल धान्यको वा स्यात्कुंभीधान्यक एव वा। त्रहैहिको वापि भवेदश्रवस्तनिक एव वा।।– मनुस्मृति– 4. 4–7
18. जैन जगदीश चन्द्र, जैन आगम साहित्य में भारतीय समाज, पृष्ठ– 122–123
19. बृहत्कल्पभाष्य – 2.32.98
20. कोष्ठागारायुधागारदेवतागारभेदकान्।
21. हस्त्यश्रवरथहर्तश्र हन्यादेवाविचारयन्।। – मनुस्मृति – 9.280
22. महास्थान पाषाण स्तम्भ लेख, सोहगौरा, अभिलेख, सरकार, सलेक्ट इन्सक्रिप्शन्स– पृष्ठ– 82–83
23. व्यवहारभाष्य – 10.556–557– उद्धृत अच्छे लाल प्राचीन भारत में कृषि– पृष्ठ – 136
24. निगम, इकोनॉमिक आरगेनाइजेशन इन एन्श्येन्ट इण्डिया, पृष्ठ– 88